ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-4* May-2017
Innovation The Research Concept

अनुसूचित क्षेत्र एवं जनजातीय विकास

आशा मेश्राम
सहायक प्राध्यापक
समाजशास्त्र विभाग,
कृष्णा कॉलेज ऑफ साईन्स एण्ड टेक्नोलॉजी,
बमरौली कटारा,
आगरा

सारांश

भारत में सामाजिक व्यवस्था और संसाधन प्रबन्धन का काम सदियों से लोग खुद करते आए हैं। देश में हुए बाहरी हमलों और नई संस्कृति से मिलने के साथ –साथ देश में सामाजिक व्यवस्था और समाज के संसाधनों पर नियंत्रण की स्थिति में बदलाव आया। ईस्ट इण्डिया कंपनी के भारत आगमन के बाद ब्रिटिश साम्राज्य जैसे– जैसे मजबूत होता गया, वैसे–वैसे देश के अधिकांश हिस्सों में लगे संसाधनों के प्रबन्धक की भूमिका से दूर हटते चले गए, लेकिन देश के आदिवासी क्षेत्रों में यह बदलाव न तो बहुत प्रभावी हो पाया और न ही आदिवासी समाज ने इन बलावों को बहुत आसानी से स्वीकार किया। आजादी के समय संविधान बनाते समय देश के आदिवासी क्षेत्रों में शासन और प्रशासन की व्यवस्था पर विस्तार से बातचीत हुई और इस बात पर सहमति बनी कि आदिवासी इलाकों के प्रशासन को अलग ढंग से देखने और समझने की जरूरत है। स्वतंत्र भारत में जनजातीय अस्मिता बनी रहे, इसके लिए पूरे देश के आदिवासी क्षेत्रों के प्रशासन के लिए अलग कानून बनाया गया।

मुख्य शब्द : जनजातीय विकास, संस्कृति,सामाजिक व्यवस्था, संविधान

प्रस्तावना

देश के आदिवासी बहुलता वाले इलाकों को संविधान ने अनुसूचित क्षेत्रों के रूप में पहचाना हे। इस अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और कानून के हिसाब से संसद और विधानमण्डलों के ऊपर देश के राष्ट्रपति और राज्यपाल को कानून बनाने की शक्ति दी गयी है, अतः संविधान, लोकतंत्र और स्वराज्य को समझते समय संविधान के इन विशेष क्षेत्रों और प्रावधानों को समझना जरूरी हो जाता है।

मध्यप्रदेश का एक बहुत बड़ा भू–भाग संविधान की पांचवी अनुसूची के तहत् अनुसूचित क्षेत्र घोषित है। संविधान की यह अनुसूची, अनुसूचित जनजातियों को लोकतांत्रिक सामाजिक व्यवस्था, परम्पराओं को संविधान के लोकतांत्रिक मूल्यों जैसा मानती हे। इस नाते से पांचवी अनुसूची में ऐसी व्यवस्था है जिसके पालन द्वारा जनजातीय जीवन की परम्परा, रीति–रिवाज और लोकतांत्रिक सामाजिक मूल्य संरक्षित रह सकें।

अनुसूचित क्षेत्र आंध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र विमाचल प्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़ एवं झारखण्ड में घोषित किए गए है। संविधान की पांचवी अनुसूची के अंतर्गत अनुसूचित क्षेत्रों की योजना में केन्द्र व राज्य सरकारों की जिम्मेदारियाँ बटी हुई हैं राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है कि वे ऐसे कानूनों को अलग करें जिन्हें अनुसूचित क्षेत्रों में लागू करना उचित नहीं है। इनकी जिम्मेदारी ऐसे नियम बनाने की भी है जो जनजातीय लोगों की जमीन की सुरक्षा और उन्हें महाजनों के शोषण से बचाने के लिए जरूरी है। राज्य सरकारें अपने क्षेत्र में रहने वाले जनाजातीय लोगों के कल्याण की योजनाएं भी लागू करती है।

केन्द्र सरकार अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के बारे में राज्यों को दिशा निर्देश देती है। यह जनजातीय प्रशासन का स्तर सुधारने एवं जनजातीय समुदायों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए जाने वाले कार्यो के लिए धन भी देती है। केन्द्र सरकारों को राज्य सरकारों को अनुसूचित जनजातियों से संबंद्ध मामलों में दिशा निर्देश देने का भी अधिकार है।

जिन राज्यों में अनुसूचित क्षेत्र है वहां के राज्यपालों को पांचवी अनुसूची के अंतर्गत यह अधिकार है कि वे केन्द्रीय सरकार व राज्य सरकारों के कानूनों में ऐसे संशोधन कर सकें जिससे वे जनजातीय द्वोत्रों में लागू किए जा सकें। वे जनजाती समुदायों के कल्याण और संरक्षण के लिए जरूरी नियम भी बना सकते हैं। पांचवी अनुसूची के अनुच्छेद के अनुसार, राज्यपाल को अनुसूचित जातियों के

शासन के बारे में राष्ट्रपति को वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होती है। पांचवीं अनुसूची के अनुच्छेद – 4 के अंतर्गत अनुसूचित क्षेत्रों वाले या बड़ी संख्या में अनुसूचित जनजातियों वाले राज्यों जेसे पश्चिम बंगाल में जनजातीय सलाहकार परिषदें बनाई गई हैं। इन परिषदों का कार्य अपने राज्य में अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण तथा कल्याण से संबंधित मामलों में राज्यपाल को सलाह देना है। परिषद् के कम से कम तीन चौथाई सदस्य अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधि होते हैं जिनका चयन राज्य विधान सभा से अथवा और जनजातीय लोगों के अन्य प्रतिनिधियों के बीच से होता हैं।

अनुसूचित क्षेत्र

अनुसूचित क्षेत्रों और उनके प्रशासन पर पांचवीं अनुसूची के उपबन्ध लागू होते है। संविधान के अनुच्छेद 244 (2) के अन्तर्गत पांचवीं अनुसूची अनुसूचित क्षेत्रों को ऐसे क्षेत्रों के रूप किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में राज्य के संबंध में राज्यपाल के परामर्श के पश्चात् घोषित करें। संसद को इस अनुसूची में कोई भी संशोधन करने का अधिकार है और इसे अनुच्छेद 368 के हेतु संविधान का संशोधन नहीं माना जाएगा।

अनुसूचित क्षेत्रों का इतिहास ''अनुसूचित जिला एक्ट 1874'' संप्रारम्भ होता है जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जिलों में दीवानी और फौजदारी के उगाही, लगान आदि से संबंधित मामलों और अन्य परिस्थितियों में अधीक्षण करे तथा प्रशासन चलाने की व्यवस्था की गई थी। इसके उपरांत ये क्षेत्र ''भारत सरकार एक्ट 1919'' तथा ''भारत सरकार एक्ट 1935'' के दौंर से गुजरते हुए अब वर्तमान संविधान में पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत है।

अनुसूचित क्षेत्रों का गठन दो बहुत ही स्पष्ट उददेश्यों से किया गया है–

1. बिना किसी बाहरी रूकावट या विघ्न के जनजातीय लोगों को अपने मौजूदा अधिकारों का पूरा–पूरा लाभ उठाने में सहायता देना।
2. अनुसूचित जनजातियों का विकास करना तथा अनुसूचित जनजातियों के हितों को संरक्षण और प्रोत्साहन प्रदान करना। अनुसूचित जनजातियां अन्य समुदायों के विपरीत एक निश्चित क्षेत्रों में रहती हैं इसलिए विकास संबंधी कार्यकलापों तथा उनके हितों की रक्षा करने के लिए विनिमय संबंधी प्रावधानों के लिए एक क्षेत्र दृष्टिकोंण रखना अधिक आसान होता है।

पांचवीं अनुसूची के अंतर्गत किसी क्षेत्र को अनुसूचित क्षेत्र के रूप में घोषित करने के लिए मानदण्ड निम्नलिखित हैं–

3. जनजातीय जनसंख्या का बाहुल्य
4. सधनता तथा क्षेत्र का उचित आकार
5. व्यवहार्थ प्रशासनिक अस्तित्व जैस–जिला, ब्लौक या तालुक
6. निकटवर्ती क्षेत्रों की तुलना में क्षेत्र का आर्थिक पिछड़ापन।

अनुसूचित क्षेत्र आन्ध्र प्रदेश झारखण्ड, गुजरात, मध्य प्रदेश छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, उड़ीसा, हिमाचल प्रदेश और राजस्थान के कुछ क्षेत्रों घोषित किए गए हैं। संविधान की पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत अनुसूचित क्षेत्रों की योजना में केन्द्र और राज्य सरकारों की जिम्मेदारियां बंटी हुई हैं। राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है कि वे ऐसे कानूनों को अलग करें जिन्हें अनुसूचित क्षेत्रों में लागू करना उचित नहीं हैं इनकी जिम्मेदारी ऐसे नियम बनाने की भी है जो जनजातीय लोगों की जमीन की सुरक्षा और उन्हें महाजनों के शोषण से बचाने के लिए जरूरी हों। राज्य सरकारें अपने क्षेत्र में रहने वाले जनजातीय लोगों के कल्याण की योजनाएं भी लागू करती हैं।

केन्द्र सरकार अनुसूचित क्षेत्र के प्रशासन के बारे में राज्यों को दिशा–निर्देश देती हैं। यह जनजातीय प्रशासन का स्तर सुधारने और जनजातीय समुदायों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए किए जाने वाले कार्यों के लिए धन भी देती है। केन्द्र सरकार को राज्य सरकारों को अनुसूचित जनजातियों के संबंध मामलों में दिशा निर्देश देने का भी अधिकार है।

जिन राज्यों में अनुसूचित क्षेत्र है वहाँ के राज्यपालों को पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत यह अधिकार है कि वे केन्द्रीय व राज्य सरकारों के कानूनों में संशोधन कर सकें जिससे वे जनजातीय क्षेत्रों में लागू किए जा सकें। वे जनजातीय समुदायों के कल्याण और संरक्षण के लिए जरूरी नियम भी बना सकते हैं। पांचवीं अनुसूची के पांचवें अनुच्छेद के अनुसार राज्यपाल को अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन के बारे में राष्ट्रपति को वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होती है। पांचवीं अनुसूची के अनुच्छेद – 4 के अन्तर्गत क्षेत्रों वाले या बड़ी संख्या में अनुसूचित जनजातियों वाले राज्यों जैसे पश्चिम बंगाल में जनजातीय सलाहकार परिषदें बनाई गईं हैं। इन परिषदों का कार्य अपने राज्य में अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण तथा कल्याण से संबंधित मामलों में राज्यपाल को सलाह देना है। परिषद के कम से कम तीन चौथाई सदस्य अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधि होते हैं, जिनका चयन राज्य विधान सभा से अथवा/और जनजातीय लोगों के अन्य प्रतिनिधियों के बीच से होता है।

अध्ययन के उद्देश्य एवं आवश्यकता

1. पांचवी अनुसूची में उल्लेखित जनजाति स्वशासन के प्रावधानों एवं उनके क्रार्यान्वयन को कार्यपालियों का अध्ययन करना।
2. पांचवी अनुसूची के माध्यम से जनजातियों को विभिन्न स्तरों पर मिले अधिकारों एवं भागीदारी का अध्ययन करना।
3. पांचवीं अनुसूची के क्रिर्यान्वयन से जनजातियों के विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

भारत में आदवासियों की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनैतिक सम्प्रभुता को यथावत् बनाये रखने के लिए संविधान में पांचवीं व छठीं अनुसूची का स्पष्ट उल्लेख किया गया है। साथ ही 1994 में गठित श्री दिलीप सिंह भूरिया समिति को अनुशंसाओं में भी इन जातियों के लिए विशेष उपबन्ध दिए गए थे। प्रस्तुत अध्ययन में यह जानने का यह प्रयास किया गया है कि झाबुआ (म.प्र.) संविधान की पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत अनुसूतिच के अन्तर्गत आता है, के अन्तर्गत आता है। लेकिन मध्य प्रदेश के विशेषकर झाबुआ के आदिवासियों

की वस्तु स्थिति कुछ अलग ही है। आज भी यहां के अधिकांश आदिवासी उसी अंदाज में जीवनयापन कर रहे हैं, जिस तरह से वे 57वर्ष पूर्व करते थें आज मीडिया के प्रचार – प्रसार और सरकारी एवं सरकार के विभिन्न प्रयत्नों से इनके जीवन में परिवर्तन आशानुरूप बहुत ही कम हो पाया है। पंचायत (अनुसूचित क्षेत्र एवं विस्तार) अधिनियम 1996 के अनुसार भूमि, जल, वन और स्थानीय स्त्रोतों पर ग्राम सभा के नियन्त्रण की बात कही गई है। ग्राम सभा की बिना अनुमति के इन प्राकृतिक सम्पदाओं का विदोहन बाहरी व्यक्ति या राज्य सरकार नही कर सकेगी। अतः इस अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया हैं कि अनुसूचित क्षेत्र एवं विस्तार अधिनिमय के बाद क्या ग्राम सभा एवं ग्रा मपंचायत अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए इन प्रावधानों के अनुरूप सक्रिय रूप से कार्य कर रहे है या नहीं, यदि नहीं तो क्यों ? ऐसी कौन सी बाधाऐं उनके सामने आ रही है। जिससे वे अपने पद व परिस्थिति के अनुसार अपने निर्णय एवं क्षमतानुरूप कार्य नहीं कर पा रहे हैं। आदिवासियों के विकास हेतु राज्य व केन्द्रसरकार भरपूर प्रयास कर रही है कि इन लोगों में जागरूकता लाकर इनका सम्पूर्ण विकास किया जाय व समाज से कटे हुए इन लोगों को समाज की मुख्य धारा में जोड़ा जाए।

निदर्शन प्रविधि

अध्ययन के लिए मध्यप्रदेश के सर्वाधिक जनजाति बाहुल्य जिला झाबुआ का चयन किया गया है। जिले में 12 विकास खण्ड हैं जिनमें से प्रत्येक विकास खण्ड एक–एक ग्राम पंचायत का चयन दैव निदर्शन विधि से किया गया है। इस जिले का चयन इसलिए भी किया गया कि यहां पर प्रचुर मात्रा में जंगल, पहाड़ एवं वन होने के साथ–साथ यहां की जनजाति अपनी सभ्यता एवं संस्कृति के अनुरूप परम्परागत रूप से आज भी निवास करती हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव

1. पाँचवीं अनुसूची में मिली प्रावधानों व देशी मदिरा के निर्माण व स्वामित्व के अधिकार के बारे में लगभग आधे जनप्रतिनिधियों को मालूम है जबकि ग्रामीण को बहुत कम (22.2 प्रतिशत को इस प्रावधान के बारे में मालूम है। अधिकतर उत्तरदाता देशी मदिरा का निर्माण महुआ व ताड़ो से करते है कुछ उत्तरदाता गुड़ से भी देशी मदिरा का निर्माण करते है जिसे दूसरे लोगों को बेचा जाता है। कुछ ग्रामीण उत्तरदाता देशी शराब की बिक्री भी करते है वे प्रति बोतल (700 मि.ग्रा.) 10 या 15 रूपये तक भी बेचते है। जिससे अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आय कर लेते हैं।
2. 84 प्रतिशत ग्रामीण आज भी साहूकारों। सूदखोरों से विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कर्ज लेते है, जिसकी दर 3रूपयें से लेकर 10 रूपये प्रतिमाह तक की भी होती है। लिये गए कर्ज का भुगतान ग्रामीण कृषि उपज देकर, नकद पैसा देकर, उनके घर मजदूरी आदि करके करते है। अधिकतर जनप्रतिनिधियों उत्तरदाताओं ने जनजातियों को गैर – जनजातियों द्वारा धन उधार देने पर नियन्त्रण लगा देने संबंधी को बहुत ही उत्तम बताया, उनका कहना था कि इससे अब आदिवासी सुरक्षित है वरना वह अपनी भूमि पर मात्र एक श्रमिक बनकर रह जाता था।
3. तीन में दो अर्थात् 66.7 प्रतिशत जनप्रतिनिधि उत्तरदाता जनजातियों की भूमि गैर– जनजातियों को बिक्री पर रोक संबंधी प्रावधानों को बहुत अच्छा मानते है, जबकि 22.7 कहते है कि कानून तो बना दिया लेकिन उसका पालन नहीं होता है। जनजातियों की भूमि हस्तांतरण पर रोक व गलत तरीके से ली गई जमीन पर वापसी के अधिकार संबंधी प्रावधान को अधिकतर, उत्तरदाता अच्छा प्रावधान मानते है। उनका कहना था कि इससे आदिवासी सुरक्षित है वरना वह भूमिहीन हो जाता है इससे उनकी पैतृक सम्पत्ति सुरक्षित है वरना वह बेघर हो जाता, गैर–जनजाति थोड़ा–थोड़ा कर्ज देकर उसकी जमीन हड़प सकते थे।
4. अनुसूचित क्षेत्रों में विकास परियोजनाओं व विस्थापितों के लिए भू–अर्जन के पहले पंचायत की राय ली जाती है। जबकि ग्राम पंचायत प्रतिनिधियों मे से अधिकतर का कहना था कि हमारी राय नहीं ली जाती है बल्कि यह कार्य शासन भोपाल में या झाबुआ हैडक्वार्टर पर ही बैठकर पूरा किया जाता है। हमारी राय कहीं पर भी बिलकुल भी नहीं ली जाती हैं।
5. 17.3 प्रतिशत जनप्रतिनिधि उत्तदाताओं का कहना था कि उत्खनन कार्य हेतु लाइसेंस देना, लाइसेंस रद्द करना, नवीनीकरणकरना अथवा लघु खनिज प्राप्ति के उत्खनन कार्य के लिए पट्टा देने के लिए ग्राम पंचायत की राय ली जाती है। इनमें से भी जिला पंचायत या जनपद पंचायत स्तर के जनप्रतिनिधियों से न कि ग्राम पंचायत सतर के जनप्रतिनिधियों से राय ली जाती है। जबकि लगभग 83 प्रतिशत का कहना था कि शासन अपने स्तर से नीतियाँ बनाता रहता है इसमें आमजन की राय नहीं ली जाती है।
6. अनुसूचित क्षेत्रों में लघुखनिजों की नीलामी में अथवा नीलामी से रियायत देने हेतु ग्राम पंचायत की सिफारिश ली जाती है। ऐसा कहने वाले 40 प्रतिशत उत्तरदाता थे जबकि 57.3 प्रतिशत का कहना था कि ग्राम सभा की सिफारिश बिल्कुल भी नहीं ली जाती है।
7. लघुवनोपज के दोहन का अधिकार आदिवासियों को दिया गया है इसके में 49.4 प्रतिशत जनप्रतिनिधि व 25 प्रतिशत ग्रामीण इस प्रावधान को अच्छा व कामयाब उपबन्ध बताते हैं, 24 व 31.2 प्रतिशत का कहना है कि कानून तो बना दिया लेकिन इसका पालन नहीं होता, एक रोचक तथ्य यह है कि 27.1 प्रतिशत ग्रामीणों को इस उपबन्ध (कानून) के बारे में कोई भी जानकारी नहीं है। ग्रामीण लोग जंगलों से वनोपज के रूप में मुख्य रूप से तेंदूफल, तेंदूपत्ता, महुआ फूल, महुआ बीज, पलाश बीज, आंवला, दोने–पत्तल बनाने के पत्ते, रस्सी बनाने का बक्कल, शहद, चिरौंजी आदि जंगलों से प्राप्त करते हैं। लगभग आधे (51.4 प्रतिशत) ग्रामीण उत्तरदाताओं का

कहना था कि वनोत्पादित वस्तुओं को वन से लाने से वनकर्मी हमसे मना करते हैं, वे हमसे पैसे मांगते हैं और उनसे वन पर अपने अधिकारों की बात करते हैं तो वे हमें गलत तरीके से हमें फँसा देते हैं।

8. लगभग आधे जनप्रतिनिधि उत्तरदाताओं (5.3 प्रतिशत) का कहना था कि पंचायतन्तर्गत आने वाले शासकीय कर्मचारियों पर पंचायत का अधिकार एवं निगरानी संबंधी कानून बहुत ही अच्छा कानून है, इससे सभी शासकीय कर्मचारी सही ढंग से कार्य करते हैं। लेकिन 24 प्रतिशत इस कानून को आपसी मतभेद (मनमुटाव) वाला बताते हैं। जनप्रतिनिधियों से पूछा गया कि यह शासकीय कर्मचारियों पर निगरानी व देख–रेख का कानून कितना सफल रहा है तो लगभग आधे (48 प्रतिशत) का कहना था कि पूरी तरह से सफल रहा है जब कि लगभग इतने ही लोगों (46.7 प्रतिशत) का कहना था कि यह कानून आंशिक रूप से सफल रहा है।
9. 33.3 प्रतिशत ग्रामीणों के गाँव में हाट लगती है जिसमें वे सब्जी भाजी, अनाज, वनोपज, मुर्गे–मुर्गी, बकरे–बकरी व पशु आदि बेचने ले जाते हैं, जबकि शेष 66.7 प्रतिशत गाँवों में हाट नहीं लगती है।
10. स्थानीय संसाधनों के दोहन एवं आदिवासियों द्वारा बनाई गई वस्तुओं का समूचित मूल्य नहीं मिलने के कारण उचित बाजार का अभाव तथा सरकार द्वारा मूल्य निर्धारण का अभाव है। हाट/बाजार के प्रबंधन पर ग्राम पंचायतों के अधिकार संबंधी कानून को आधे लोग (48 प्रतिशत) जनप्रतिनिधि अच्छा कानून मानते हैं, जिससे हाट/बजार का प्रबन्धन ग्राम पंचायत आसानी से कर लेती है।
11. ग्रामीणों से पूछा गया कि आप अपनी कृषि उपज कहाँ बेचने ले जाते हैं तो 44.5 प्रतिशत का कहना था कि स्थानीय व्यापारियों को 8.3 प्रतिशत कृषि उपज मण्डी में, 25.7 प्रतिशत हाट/बाजार में, 14.7 प्रतिशत कर्ज लेने वाले सूदखोरों को बेच देते हैं।
12. 56.9 प्रतिशत ग्रामीणों का कहना था कि हमारा क्षेत्र अनुसूचित क्षेत्र में होने एवं नये पंचायतीराज के आने से हमारे रहन–सहन, खान–पान, पहनावे–उढ़ाव, आचार–विचार, सांस्कृतिक–धार्मिक तौर–तरीकों में पहले से काफी बदलाव आया है।
13. अब आदिवासी लोग, उनके बच्चे घर से बाहर दूसरे शहरों में काम करने जाने लगे हैं जिससे वे और लोगों की तरह पहनने–ओढ़ने लगे हैं। शासकीय प्रयासों से ए.एन.एम., आंगनवाड़ी कार्यकर्ता, सामाजिक कार्यकर्ता आदि से अब हमारे रहन–सहन का स्तर काफी सुधर गया है। बाहरी दुनिया के संपर्क में आने से व दूसरे शहरों में काम करने जाने के उपरांत गाँव में वापस आने पर खाने–पीने में बहुत कुछ बदलाव आ गया है। अब प्रतिदिन तो नहीं लेकिन दिन में एक समय घर में सब्जी/दाल से रोटी खाने लगे हैं, लेकिन परम्परागत रूप से आज भी उड़द, मोंठ की रोटी व देशी मदिरा आज भी पीते हैं। वर्तमान में पूरी तरह से तो नहीं लेकिन आंशिक रूप से शादी–विवाह तीज त्यौहार में बदलाव देखने को मिलता है। वर्तमान में शादी में दापा (वधूमूल्य) अधिक हो गया है। विवाहों में अब अंग्रेजी बैण्डबाजों की धुन भी सुनने को मिलती है। शिक्षा के प्रचार–प्रसार के कारण अब बाल विवाह कम ही देखने को मिलते हैं। धार्मिक तौर–तरीकों में बदलाव न के बराबर हुआ है । 97 प्रतिशत ग्रामीण उत्तरदाताओं का कहना है कि हम आज भी पुराने धार्मिक तौर–तरीकों, परम्परागत प्रथाओं, परम्पराओं, कर्मकाण्डों को ही मानते हैं व उनमें विश्वास करते हैं। आज भी पशुबलि, धार्मिक कृत्य, बड़वे का महत्व यथावत है। पाँचवी अनुसूची में आने के बाद भी हमारे क्षेत्र में आज भी परम्रागत आदिवासी तौर–तरीके प्रचलित हैं लेकिन संविधान का औपचारिक कानून इनको नहीं मानता है। आज भी क्षेत्र परम्परागत तौर–तरीकों को ही अपनाता है।
14. जंगलों पर ग्राम सभा अर्थात् ग्राम सभा के लोगों का स्वामित्व होने से भी ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति में वनों से कोई खास फायदा नहीं मिल पाता, क्योंकि जंगलों से अधिकाधिक फायदा सरपंच, ग्राम सचिव, वनपाल : प्रभावशाली व्यक्ति आदि ही इसका फायदा ले पाते हैं।

निष्कर्ष

मध्य प्रदेश का एक बहुत बड़ा भू–भाग संविधान की पाँचवी अनुसूची के तहत अनुसूचित क्षेत्र घोषित है संविधान की अनुसूचित जनजातियों की लोकतांत्रिक सामाजिक व्यवस्था, परम्पराओं को संविधान के लोकतांत्रिक मूल्य जैसा मानती है। इस नाते से पाँचवी अनुसूची में ऐसी व्यवस्था जिसके परिपालन द्वारा जनजातीय जीवन की परम्परा, रीतिरिवाज और लोकतांत्रिक सामाजिक मूल्य संरक्षित रह सकें। संविधान द्वारा प्रदत्त विशेष प्रावधानों के कारण अनुसूचित जनजातियों का सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक अर्थात उक्त समाज का सम्पूर्ण विकास सम्भव हुआ है।

सुझाव

1. विभिन्न सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वासों, रूढ़ियों आदि के प्रति उचित व अनुचित में भेद करेन के लिए समय – समय पर जनजागरूकता काग्रक्रमों व अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से उनमें जागरूकता लायी जा सकती हैं। प्रत्येक ग्राम पंचायत में ग्राम सभा रजिस्टर में तो उल्लिखि है लेकिन वास्तविक रूप में वह न के बराबर ही कार्य कर रही हैं अनुरूचित क्षेत्रों में 1996 में पंचायत (विस्तार एवं अनुसूचित क्षेत्र) अधिनियम के द्वारा ग्राम सभा को बहुत अधिक अधिकार दिए गए है। अतः ग्राम सभा के सदस्यों द्वारा अपने अधिकारों को समझना चाहिए।
2. अनुचित जनजातियों का विकास समाज के अन्य वर्गों की तरह आवश्यक है उनके पहनाव–उढ़ाव, खान–पान, रहन–सहन सांस्कृतिक रूप में बदलाव न करके विकास करना शासन व जनप्रतिनिधियों की जिम्मेदारी हैं। जिस तरह प्राचीन काल में आदिवासी पंचायतें परम्परागत रूप से कार्य करती थी और वे किसी भी सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक

झगड़े मारपीट आदि का निपटारा गांव में ही करती थी। आज नवीनतम औपचारिक कानून के बढ़ते हस्तक्षेप, पंचायती राज संस्थाओं के प्रभावी होने से इनके अधिकारों मे कमी आयी है। आज ये केवल छोटे – मोटे झगड़े निपटाने आदि तक ही सीमित हो गई है। अतः इन परम्परागत पंचायतों को अधिकाधिक अधिकार प्राप्त होने चाहिए।

3. अनुसूचित क्षेत्रों में जनजाति व्यक्ति की भूमि के भू–अर्जनकरने से पूर्व व परियोजना से प्रभावित व्यक्ति को पुर्नस्थापित पुनर्वास करने से पूर्व ग्राम सभा से विचार विमर्श किया जाए।
4. सीमित मात्रा में देशी मदिरा के निर्माण व स्वामित्व का अधिकार जनजातियों को दिया गया है लेकिन अध्ययन मेंयह भी देखने में आया है कि कई बार देशी मदिरा के निर्माण करने पर व्यक्ति को पुलिस पकड़ लेती है जो बिलकुल गलत है।
5. जनजातिय लोग आर्थिक रूप से काफी गरीब होते है गरीबी की मुख्य कारण कृषि भूमि का अधिक उवरके न होना, कृषि योग्य भूमि की कमी, पानी की अनुपलब्धता, कृषि की उन्नत दशाओं का न होना है। इसके लिए रोजगार के अवसरों में वृद्धि करके व स्वरोजगार के लिए लोगों को प्रेरित व प्रशिक्षित कर इस समस्या का समाधान किया जा सकता हैं।
6. सूदखोर/महाजन जनजातीय व्यक्ति के भोलेपन का फायदा उठाकर उसे काफी महंगी दर पर ऋण उपलब्ध करता है जिससे गरीब आदिवासी आजीवन ऋण के चंगुल में फंसा रहता है। सरकार को चाहिए कि वह सस्ती दर पर सहकारी समितियों से बिना किसी अड़चन के ऋण उपलब्ध कराए।
7. लघु वनोपज की खरीद के लिए शासन को स्थानीय स्तर पर सहकारी समितियाँ स्थापित होनी चाहिए और इनकी देख–रेख भी सरकार ही करे। ठेकेदार तोल या मात्रा के अतिरिक्त वनोपज का कुछ हिस्सा ग्रामीणों से फालतू में लेते हैं जिससे आदिवासियों को आर्थिक हानि होती है। वनकर्मियों पर सरकार को कठोर निगरानी रखने की जरूरत है क्योंकि ये वनकर्मी इन भोले भाले आदिवासियों से वनोपज लाने से टोकते हैं। आदिवासियों का पैदा होने से मरने तक इन जंगलोंसे गहरा नाता रहा है, है और रहेगा भी। आज वन उस वनवासी के लिए पराए हो गए हैं जो युगों से वनों पर अपना जीवन बसर करता आया है, लेकिन अब वहाँ जीवन बसर करना अपराध हो गया है, ऐसा औपचारिक कानूनों के द्वारा संभव हुआ है। सरकार को चाहिए कि पांचवी अनुसूची क्षेत्रों में आदिवासियों को वनों से जीवन को समस्त आवश्यकताओं को पूरा करने का अधिकार प्राप्त हो।
8. एक आदिवासी व्यक्ति को कितनी भी देशी मदिरा बनाने की छूट दी जाय लेकिन शराब बेचने पर पाबन्दी कठोरता से लगाई जाय। इसके लिए कठोर प्रशासनिक व्यवस्था की जाय। देशी मदिरा का विनिर्माण एवं बेचने व लाने ले जाने के सभी अधिकार दिये गये हैं अतः इन्हें इन प्रावधानों से सूचित कराने की आवश्यकता है, जिससे वे प्रशिक्षित होकर उसका फायदा उठा सकें।
9. आदिवासियों के परम्परागत आदिवासी कानूनों को संवैधानिक रूप से मान्यता मिलनी चाहिए। जितना आकर्षण व अपनापन किसी भी समाज के लिए अपनी भाषा में होता है उतना प्रांतीय भाषा में नहीं होता। इसलिए आदिवासी बच्चों को आरम्भिक उसकी स्थानीय भाषा (भीली) में दी जा सकती है।
10. आदिवासियों के विकास के नाम पर उसकी मूल संस्कृति, धर्म, पवित्रता स्वतंत्रता, परम्पराएँ, रीति–रिवाज़ में बदलाव नहीं किया जाना चाहिए। शासन द्वारा आदिवासियों के विकास के लिए बहुत प्रावधान किये गये हैं, मगर शिक्षा का स्तर कम होने की वजह से वे लोग अपने अधिकारों का सही उपयोग नहीं कर पाते हैं अतः इन लोगों को जागरूक करने के अधिक से अधिक प्रयास किये जाने चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *मेहता, प्रकाशचन्द, 1993, भारत के आदिवासी, शिवा पब्लिशर्स, उदयपुर*
2. *नायडू, पी०आर०, 1997, भारत के आदिवासी विकास की समस्यायें, राधा पब्लिकेशन्स, दिल्ली*
3. *हसनैन, नदीम, 2001, जनजातीय भारत, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली*
4. *वैद्य, नरेश कुमार, 2003, जनजातीय विकास : मिथक एवं यथार्थ, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर*
5. *सिंह, लीना, 2005, अनुसूचित क्षेत्र : स्वशासन एवं विकास, डिवेट, गैर सरकारी संस्था, भोपाल*
6. *मेश्राम, डॉ० आशा, 2007, पी–एच.डी. थीसिस (अप्रकाशित)*
7. *अनुसूचित क्षेत्रों हेतु महत्वपूर्ण संहिता अधिनियमों में संशोधन सम्बन्धी आदिम जाति एवं अनुसूचित जाति कल्याण विभाग, मध्य प्रदेश शासन की रिपोर्ट*